IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 31, Issue 8, Series 1 (August, 2026) 103-106
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

शौकिया और व्यावसायिक रंगमंच का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. अरविन्द कुमार मीणा
एसोसिएट प्रोफेसर
श्री वेंकटेश्वर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

मंच पर अभिनय कर रहे अभिनेताओं से जब दर्शकदीर्घा में बैठे दर्शक सीधे - तौर पर जुड़ चुका होता है, तब रंगमंच का विभाजन शौकिया और व्यावसायिकता के आधार पर करना बेईमानी होगी। लक्ष्मीनारायण लाल कहते हैं- "मुझे ये 'एम्च्योर थिएटर' वाली बात कभी समझ में नहीं आती। क्या कभी आपने 'एम्च्योर डाक्टर' या 'एम्च्योर इंजीनियर' की बात सुनी है? नहीं होते न, फिर 'एम्च्योर नाटककार' या 'एम्च्योर थिएटर' कैसे हो सकता है?"[1] वस्तुतः रंगमंच को अपने प्राकृतिक रूप में शौकिया या व्यावसायिक रूप में हम विभाजित नहीं कर सकते। परन्तु जब रंगमंच को रोजगार या आजीविका के साधन के रूप में हम देखते हैं तो यह विभाजन अध्ययन की दृष्टि से और रंगमंच के विकास की दृष्टि से भी अनिवार्य जान पड़ता है।

भारत में रंगमंच की यूँ तो एक लम्बी परम्परा रही है लेकिन पारसी रंगमंच के पूर्व इस क्षेत्र का पूर्णतः व्यवसायिकरण नहीं हुआ था। प्रारंभ से ही पारसियों ने रंगमंच को आजीविका के साधन के रूप में देखा। इनका उद्देश्य अधिकतम धन अर्जित करना था। लक्ष्मीनारायण लाल लिखते हैं- "पारसी रंगमंच - काल का प्रस्तुतकर्ता स्वभावतः अपने इस उद्देश्य में लगा था कि उसे अधिक से अधिक धन प्राप्त हो जाये। उसको यह कतई चिन्ता न थी कि वह खेल क्या रहा है, उसकी रचना क्या है, वह रचना कैसी रंगसज्जा मांगती है। कैसा प्रकाश और कैसा सम्पूर्ण रंगशिल्प, वह रचना किस काल पर आधारित है, किस युग की व्यंजना है उसमें, उसके लिए कैसा वातावरण और कैसा अभिनय चाहिये, इन बातों की उसने जरा भी चिन्ता न की। प्रदर्शन! मात्र प्रदर्शन!"[2] यह वही समय था जब "भारतेन्दु ने पारसी रंगमंच की असाहित्यिक प्रवृति से खीज़कर अव्यावसायिक रंगमंच को प्रारंभ किया। प्रथम 'जानकी मंगल' में लक्ष्मण का अभिनय किया। तदुपरांत खुद ही नाटक लिखकर खेलने लगे। भारतेन्दु की साधना ने अव्यावसायिक रंगमंच पर नवजागरण लाकर खड़ा कर दिया।"[3] इस अव्यावसायिक रंगमंच का स्वरूप, प्रवृत्तियाँ और उद्देश्य पारसी रंगमंच जो कि पूर्णतः व्यावसायिक रंगमंच था, से भिन्न था। इसी को आधार बनाकर विद्वानों ने रंगगंच का विभाजन शौकिया और व्यावसायिक रंगमंच में कर दिया।

मुख्य रूप से आजीविका को आधार बनाकर रंगमंच का विभाजन किया गया है - शौकिया और व्यावसायिक। शौकिया वे जो अपनी शगल के लिए रंगमंच से जुड़े हैं तथा व्यावसायिक वे जो रंगकर्म का व्यवसाय करते हैं। शौकिया रंगमंच से जुड़े अभिनेताओं की आजीविका का साधन रंगमंच न होकर कुछ और होता है। रंगमंच इनका मुख्य पेशा नहीं होता । सामान्यतः शौकिया रंगमंच के कलाकार स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालयों के छात्र या दफ्तरों में काम करने वाले कर्मचारी होते हैं। शौकिया रंगकर्मियों के भीतर भरपूर उत्साह और जोश होता है, जो शौकिया रंगमंच को उर्जावान बनाता है। बलवंत गार्गी का वक्तव्य है- "यह उत्साह और निष्ठा ही थी कि कठिनाईयों के होते हुए भी अपनी त्रुटियों से सीख-

सीखकर उन्नति करते रहे।"[4] इसके विपरीत व्यावसायिक रंगमंच से जुड़े कालाकारों की आजीविका का मुख्य साधन रंगमंच ही होता है। रेवती शरण शर्मा कहते हैं - "मेरे लिए व्यावसायिक थिएटर का अर्थ है - मनोरंजक और आम लोगों द्वारा पसन्द किए जाने वाला थिएटर। वह थिएटर जो उसके करने वालों की रोजी-रोटी चला सके।"[5] इन व्यावसायिक रंगमंडलियों का कोई एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह मालिक की भूमिका में रहता है। जो कलाकारों का चयन उनकी प्रतिभा और अपनी सहूलियत के आधार पर करता है। ये कलाकार भी रंगमंच के प्रति व्यावसायिक दृष्टिकोण रखते हैं। इन कलाकारों को अपना और अपने परिवार का भरण-पोषण रंगमंच से प्राप्त आय से ही करना होता है। अतः कहा जा सकता है कि शौकिया कलाकारों की अपेक्षा व्यावसायिक रंगमंच से जुड़े कलाकार रंगमंच में पैसे की संभावनाओं को अधिक तलाशते हैं।

शौकिया रंगमंच में टिकट की बिक्री नहीं होती और कहीं होती भी है तो वह केवल प्रतीक रूप में । शौकिया रंगमंच वस्तुतः अनुदान पर आधारित रंगमंच है। यह मितव्ययी है। इसमें भव्यता का आग्रह नहीं होता। शौकिया रंगमंडलियाँ सस्ती लोकप्रियता या सफलता नहीं चाहती। ये रंगमंच को पैसा कमाने का साधन-भर नहीं मानती। बादल सरकार कहते हैं - "हाँ, टिकट बेचने और खरीदने के मैं बिल्कुल खिलाफ हूँ । टिकट लगाते ही मेरा रंगकर्म 'चीज' बन जाता है और दर्शक उपभोक्ता इस सारे क्रियाकलाप पर बाजार के नियम लागू हो जाते हैं। वह एक व्यवसाय बन जाता है। यह एक दुष्चक्र है।"[6] दूसरी तरफ व्यावसायिक रंगमंच को अपने प्रदर्शन से पूर्व दर्शकों की संख्या और उनसे होने वाली टिकटों की बिक्री की चिन्ता सदैव ही सताती है। व्यवसायिक रंगमंच की आय का मुख्य स्त्रोत टिकटों की बिक्री ही है। सरेन्द्र माथुर मानते हैं - "हम पूरी तरह टिकट बिक्री पर ही निर्भर रहते हैं।"[7] व्यावसायिक रंगमंच भव्यता लिए हुए होता है इसलिए इसका खर्च भी शौकिया रंगमंच की तुलना में अधिक होता है। व्यावसायिक रंगमंच में दर्शकों की संतुष्टि का पूर्ण ध्यान रखा जाता है। रंजीत कपूर कहते हैं- "मैं दर्शक के समय और पैसों की समुचित वसूली के लिए अपने को जिम्मेदार मानता हूँ।"[8] इसके विपरीत शौकिया रंगमंच में दर्शकों की संतुष्टि की अपेक्षा कलाकारों की आत्मसंतुष्टि पर आधिक बल होता है। यहाँ पैसे को महत्व न देकर अपने शगल, उत्साह, त्याग और समर्पण को महत्व दिया जाता है।

आमतौर पर शौकिया रंगमंच आत्मसंतुष्टि के लिए होता है इसलिए शौकिया रंगमंच करने वाली मंडलियों द्वारा प्रदर्शित नाटक अधिकांशत: साहित्यिक होते हैं। "भारतेन्दु ने पारसी रंगमंच की असाहित्यिक प्रवृत्ति से खीजकर अव्यावसायिक रंगमंच का प्रारंभ किया था।"[9] भारतेन्दु मंडल और आगे आने वाली अधिकांश शौकिया रंगमंडलियों ने साहित्यिक विषयों पर आधारित नाटकों का मंचन ही अधिक किया। "शौकिया रंगमंच ने पश्चिमी नाटक को साहित्य का ही एक रूप माना है और यह मानता है कि नाटक साहित्य का सर्वश्रेष्ठ रूप है।"[10] प्रसाद युग में हमें विरोध और असहमति की आवाज देखने को मिलती है। शौकिया रंगमंच में "विषय की दृष्टि से अवश्य इन मंचों ने पौराणिक विषयों को अपनाने में प्राथामिकता दी है। देश प्रेम की भावना और विचारधारा का इसमें समुचित प्रयोग हुआ है। चरित्रों में अधिक गम्भीरता है। हास्य में भी सुरूचि का ध्यान रखा गया है। कविताएँ पारसी कम्पनियों की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं।"[11] शौकिया रंगमंच के विपरीत व्यावसायिक रंगमच इस बात की परवाह नहीं करता कि विषय-वस्तु साहित्यिक है या असाहित्यिक। इसकी विषय-वस्तु तो मनोरंजन प्रधान ही होती है। व्यावसायिक रंगमंच धन को केन्द्र में रखकर चलता है इसलिए यहाँ दर्शकों के मनोरंजन का पूरा ध्यान रखा जाता है। यह रंगमंच को एक पूर्ण व्यवसाय के रूप में देखता है।

व्यावसायिक रंगमंडलियाँ संसाधनों से युक्त होती हैं। "व्यावसायिकता का आग्रह और उसकी स्वीकृति का सीधा अर्थ है दर्शक को केन्द्र में रखकर नाटक प्रस्तुत करना। दर्शक भी केवल रोचक और उत्तेजक मनोरंजन चाहते हैं।"[12] यहाँ अधिकांश प्रस्तुतियों में भव्यता का आग्रह होता है। भड़कीली साज-सज्जा, बात-बात पर नृत्य गान, फडकते संवाद, रोमांचक दृश्य, चमत्कारपूर्ण दृश्य आदि व्यावसायिक रंगमंच की पहचान है। इन सब में बेहिसाब खर्चा होता है। यह सारा खर्चा आमतौर पर दर्शकों को बेची जाने वाली टिकटों से आता है। इसके विपरीत शौकिया रंगमंच करने वाली मंडलियां अभावग्रस्त रहती हैं। यहाँ संसाधनों का अभाव हमेशा ही रहता है। यहां भव्यता का अभाव रहता है। यहाँ मितव्यतता पर बल होता है। बादल सरकार कहते हैं- "यह मितव्ययी हो, लोगों की समस्याओं को व्यक्त करने के लिए बेताब हो और किसी प्रकार की व्यवसायिकता से मुक्त हो, तभी यह 'फ्री' या 'आज़ाद' थियेटर हो सकता है। ये 'फ्री' या 'आज़ाद' थिएटर करने वाले शौकिया कलाकार अधिकांशत: स्कूल, कालेज विश्वविद्यालय के छात्र या दफ्तरों में काम करने वाले कर्मचारी होते हैं। ये आपस में ही मिल-जुल कर शौकिया नाट्य मंडलियों का निर्माण करते हैं। इन मंडलियों का अपना कोई खास स्टेज नहीं।"[13] इन्हें सप्तखण्डीय मंचों की आवश्यक्ता नहीं। ये स्कूल, कॉलेज के छोटे कोठरीनुमा मंच पर ही अपना मंचन कर देते हैं। इन्हें जहाँ भी थोड़ा सा स्पेस मिल जाता है, ये वहीं अपनी नाट्य प्रस्तुति कर देते हैं। महंगे प्रेक्षागृह का किराया ये मण्डलियाँ वहन नहीं कर सकती। व्यावसायिक रंगमंडलियां महानगरों में महंगे प्रेक्षागृह बुक करने में सक्षम होती हैं इसलिए आमतौर पर ये अपनी प्रस्तुति बड़े प्रेक्षागृह में ही करती हैं।

शौकिया रंगमंडलियां अपनी प्रस्तुति किसी धार्मिक पर्व या स्कूल-कॉलेज के वार्षिक समारोह या प्रतियोगिताओं में ही करती हैं। इसलिए इनमें स्थायित्व का अभाव पाया जाता है। इसके विपरीत व्यावसायिक रंगमंच में स्थायित्व का भाव पाया जाता है। "जहाँ प्रोफेशनल थिएटर होता है- वहाँ पर हर दिन पर्दा उठता है।"[14] व्यावसायिक मंडलियों में स्थायित्व भाव के बावजूद डॉ. चन्द्रशेखर कम्बार का मानना है कि- "शौकिया रंगमंच, जो व्यावसायिक रंगमंच के मुकाबले अधिक परिष्कृत है और अधिक सुसंस्कृत और शिक्षित सुसभ्य दर्शकों को संबोधित करता है।"[15] शौकिया रंगमंच अपने प्रतीकात्मक स्वरूप में व्यावसायिक रंगमंच से बेहतर है या नहीं, इस प्रश्न में न उलझ कर यहाँ रंगमंच के विकास और स्टैण्डर्ड की बात करना ज्यादा प्रासंगिक होगा। "सवाल यह नहीं है कि शौकिया रंगमंच अच्छा है या बुरा है- नाटक यह भी अच्छा है, नाटक पेशेवर भी अच्छा है; सवाल यह है कि शौकिया नाटक जो हो रहा है वो कैसा हो रहा है और कहाँ तक पहुंच रहा है। उसका स्टैण्डर्ड बराबर है या नहीं |"[16]

भारतेन्दु युग में शौकिया रंगमंच जब अस्तित्व में आया तभी से शौकिया और व्यावसायिक रंगमंच में हमें कुछ बुनियादी अन्तर देखने को मिलते हैं। शौकिया रंगमंच में जहाँ अपने शगल को महत्व दिया जाता है, वहीं दूसरी तरफ व्यावसायिक रंगमंच के केन्द्र में धन है। शौकिया रंगमंडलियों के कलाकार अपनी आजीविका के लिए आय के दूसरे स्त्रोतों पर निर्भर हैं वहीं व्यावसायिक रंगमंच के कलाकार अपनी आजीविका के लिए रंगमंच से होने वाली आय पर निर्भर है। शौकिया रंगमंच की विषय-वस्तु जहाँ आमतौर पर साहित्यिक होती है वहीं व्यावसायिक रंगमंच की विषय-वस्तु मनोरंजन प्रधान होती है। शौकिया रंगमंच स्वभाविक रूप मे मितव्ययी है तो व्यावसायिक रंगमंच भक्यता लिए हुए होता है। शौकिया रंगमंडलियों को जहाँ स्पेस मिल जाए ये वहीं अपनी नाट्य प्रस्तुति कर देती हैं। जबकि व्यावसायिक रंगमंडलियां अपने प्रदर्शन टिकट लगाकर प्रेक्षागृह में करना पसंद करतीं हैं। उपरोक्त अंतर के बावजूद इस बात में कोई शंका नहीं कि हिंदी रंगमंच के लिए शौकिया और व्यावसायिक दोनों ही रंगमंच की अपनी-अपनी महत्वपूर्ण भूमिका रही है और रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

- रंग-साक्षात्कार, जयदेव तनेजा, पृ. 43
- आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच, डॉ लक्ष्मीनारायण लाल, पृ. 16
- हिंदी रंगमंच का इतिहास - पहला भाग (हिंदी नाटक मंडलियों का इतिहास), डा. चन्दूलाल दुबे, पृ. 40
- रंगमंच, बलवंत गार्गी, पृ. 239
- रंग-साक्षात्कार, जयदेव तनेजा, पृ. 78
- वही, पृ. 33
- वही, पृ. 309
- वही, पृ. 214
- हिंदी रंगमंच का इतिहास - पहला भाग (हिन्दी नाटक मंडलियों का इतिहास), डॉ. चन्दूलाल दुबे, पृ. 40
- रंग प्रसंग, अंक-2, पृ. 9
- भारतीय रंगमंच उद्भव और विकास, डॉ. रघुवीर दयाल वार्ष्णेय, पृ. 56
- स्वातंत्र्योत्तर हिंदी रंगमंच, डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, पृ. 140
- रंग दस्तावेज - सौ साल (खण्ड-एक) महेश आनंद, पृ. 253
- वही, पृ. 13
- रंग प्रसंग, अंक-2, पृ. 9
- रंग प्रसंग, अंक-36, पृ. 36